वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वेद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये (३०/-वार्षिक) जून २०१७

कुल पृष्ठ संख्या २०, वजनः 40 ग्राम
प्रकाशन तिथिः 4 जून 2017

अन्तःपथ

वैदिक सभ्यता और संस्कृति *-अम्बाराम सिद्धान्त शास्त्री*	३ से १०
विश्व शान्ति का मूल मन्त्र मानवता है *-आचार्य वेदसिन्धु आर्यन् हैदराबाद, तेलंगाना*	१० से १३
जीवात्मा-आत्मा-रुह का परिचय	१३ से १८

एक बार भगवान महावीर को एक उपासक ने पूछा मृत्यु एवम् मोक्ष में : क्या अंतर है? इस प्रश्न का इतना शानदार जबाब भगवान महावीर ने यह दिया:-

साँसें पूरी हो जायें और तमन्नायें बाकी रहें तो वह 'मृत्यु' है और अगर साँसें बाकी रहें और तमन्नायें पूरी हो जायें तो वह 'मोक्ष है'

बोध कथा
इच्छापूर्ति वृक्ष

एक घने जंगल में एक इच्छापूर्ति वृक्ष था, उसके नीचे बैठ कर कोई भी इच्छा करने से वह तुरंत पूरी हो जाती थी। यह बात बहुत कम लोग जानते थे क्योंकि उस घने जंगल में जाने की कोई हिम्मत ही नहीं करता था।

एक बार संयोग से एक थका हुआ व्यापारी उस वृक्ष के नीचे आराम करने के लिए बैठ गया उसे पता ही नहीं चला कि कब उसकी नींद लग गई। जागते ही उसे बहुत भूख लगी, उसने आस-पास देखकर सोचा–'काश कुछ खाने को मिल जाए!' तत्काल स्वादिष्ट पकवानों से भरी थाली हवा में तैरती हुई उसके सामने आ गई।

व्यापारी ने भरपेट खाना खाया और भूख शांत होने के बाद सोचने लगा काश कुछ पीने को मिल जाए तत्काल उसके सामने हवा में तैरते हुए अनेक शरबत आ गए। शरबत पीने के बाद वह आराम से बैठ कर सोचने लगा कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा हूँ।

हवा में से खाना पानी प्रकट होते पहले कभी नहीं देखा न ही सुना जरूर इस पेड़ पर कोई भूत रहता है जो मुझे खिला-पिला कर बाद में मुझे खा लेगा ऐसा सोचते ही तत्काल उसके सामने एक भूत आया और उसे खा गया।

इस प्रसंग से आप यह सीख सकते हैं कि हमारा मस्तिष्क ही इच्छापूर्ति वृक्ष है आप जिस चीज की प्रबल कामना करेंगे वह आपको अवश्य मिलेगी।

अधिकांश लोगों को जीवन में बुरी चीजें इसलिए मिलती हैं क्योंकि वे बुरी चीजों की ही कामना करते हैं। इंसान ज्यादातर समय सोतचा है कहीं बारिश में भीगने से मैं बीमार न हो जाँऊ और वह बीमार हो जाता है।

इंसान सोचता है मेरी किस्मत ही खराब है और उसकी किस्मत सचमुच खराब हो जाती है।

इस तरह आप देखेंगे कि आपका अवचेतन मन इच्छापूर्ति वृक्ष की तरह आपकी इच्छाओं को ईमानदारी से पूर्ण करता है। इसलिए आपको अपने मस्तिष्क में विचारों को सावधानी से प्रवेश करने की अनुमति देनी चाहिए।

यदि गलत विचार अंदर आ जाएगे तो गलत परिणाम मिलेंगे। विचारों पर काबू रखना ही अपने जीवन पर काबू करने का रहस्य है! आपके विचारों से ही आपका जीवन या तो स्वर्ग बनता है या नरक उनकी बदौलत ही आपका जीवन सुखमय या दुखमय बनता है।

विचार जादूगर की तरह होते हैं, जिन्हें बदलकर आप अपना जीवन बदल सकते हैं! इसलिये सदा सकारात्मक सोच रखें यदि आप अच्छा सोचने लगते हैं तो पूरी कायनात आपको और अच्छा देने में लग जाती है।

वेदप्रकाश

वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६६ अंक ११ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, जून, २०१७

सम्पा० **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व० **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

वैदिक सभ्यता और संस्कृति

—अम्बाराम सिद्धान्त शास्त्री

सदियों पराधीनता के बाद अब भारत स्वाधीनता के मार्ग पर चल पड़ा है। हम दूसरों के बताये मार्ग पर चल रहे थे अब हम अपने बनाये मार्ग पर चल रहे हैं। भारतीय विचारधारा की परंपरा के आधार पर भारतीय साहित्य के आधार पर यह बतलाया जा सकता है कि अब तक हमारे मार्ग की दिशा क्या रही है, हम पराधीन होने से पहले सैकड़ों नहीं हजारों सालों तक किस मार्ग पर और उस मार्ग पर भी किस दिशा की तरफ चलते रहे हैं। वैदिक संस्कृति के मूल तत्वों को जानने वालों का यह निश्चित विचार है कि प्राचीन काल में भारत के ऋषि महर्षियों ने भारत को जिस मार्ग पर डाला था इस देश के सम्मुख जो लक्ष्य निर्धारित कर दिया था वही मार्ग और वही लक्ष्य हमारा और संसार का कल्याण कर सकता है और अब फिर भारत को अपने तथा विश्व के कल्याण के लिये उसी मार्ग पर चलना होगा उसी ध्येय को अपना लक्ष्य बनाना होगा। भारत के भविष्य का निर्माण अगर ऋषि मुनियों के निर्धारित किये हुए लक्ष्य सम्मुख रखकर होगा तो यह देश फिर से संसार का मार्ग प्रदर्शक बनेगा, फिर से दुनियां का सरताज होगा परन्तु प्रश्न उठता है कि वह लक्ष्य क्या था उसे कहां ढूढें कहाँ पायें।

उस लक्ष्य को पाने के लिये हमें वैदिक संस्कृति के मूल तत्वों की खोज में निकलना होगा। इस देश ने अपने यौवन काल में एक संस्कृति को जन्म दिया था जो अन्य संस्कृतियों से भिन्न थी। जैसे आजकल बड़े-बड़े शहरों पर गौरव किया जाता है, अमुक शहर में चालीस-साठ मंजिल के मकान हैं, साठ-साठ किलोमीटर दायरे तक मकान ही मकान बने हुए हैं, वैसे भारतीय संस्कृति में बड़े-बड़े तपोवनों पर गौरव किया जाता था। अमुक ऋषि दण्डकारण्य में रहते हैं। अमुक ऋषि बृहदारण्य में निवास करते हैं। उस संस्कृति में शहर तो थे परन्तु शहरों की अपेक्षा जंगल अधिक मशहूर थे। शहर चारों तरफ से ऐसे वनों से घिरे हुए थे, जिनमें तपस्वी लोग अपनी कुटियाओं में बैठे आध्यात्मिक तत्वों का चिंतन किया करते थे। तपोवनों की वह संस्कृति आज भी शहरों की सभ्यता से मौलिक

रूप में भिन्न थी। आजकल के लोग तपोवनों के उन ऋषि-मुनियों के लिए सभ्य शब्द का प्रयोग करते हुए हिचकिचाते हैं इसलिये यह जान लेना आवश्यक है कि सभ्यता और संस्कृति में क्या भेद है और अगर हम उन्हें सभ्य न कहें तो क्या संस्कृति की दृष्टि से हमारे किसी मान दण्ड से वे जीवन की तुला में हमसे हल्के उतरते हैं।

सभ्यता भौतिक, संस्कृति और आध्यात्मिक है–

सभ्यता तथा संस्कृति में आधारभूत भेद है। सभ्यता शरीर है, संस्कृति आत्मा है, सभ्यता बाहर की चीज है, संस्कृति अन्दर की चीज है, सभ्यता भौतिक विकास का नाम है, संस्कृति आध्यात्मिक विकास का नाम है। रेल, वायुयान, टेलिविजन, मोटर कार आदि ये सब सभ्यता के विकास के निदर्शक हैं, सचाई-झूठ, ईमानदारी-बेईमानी, सन्तोष-असन्तोष, संयम-संयमहीनता आदि ये सब संस्कृति के ऊंचे या नीचे विकास के निदर्शक हैं।

यह जरूरी नहीं कि संस्कृति के विकास में हम इस परिणाम पर ही पहुँचें कि हमें जीवन में सचाई से ही काम लेना चाहिए, झूठ से नहीं, ईमानदारी से ही रहना चाहिए, बेईमानी से नहीं, संतोष को ही लक्ष्य बनाना चाहिए, असंतोष को नहीं, संयम से ही रहना चाहिए, असंयम से नहीं। हो सकता है कोई देश ऐसी संस्कृति को ही अपनाये जिसमें झूठ बेईमानी, असंतोष, संयमहीनता आदि की आधारभूत तत्व हों, परन्तु ऐसों को सु-संस्कृति नहीं कहा जा सकता। संस्कृति के क्षेत्र में जो लोग अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह तथा इसी प्रकार के आध्यात्मिक तत्वों को आधार बनाकर चलेंगे वे एक प्रकार से संस्कृति को जन्म देंगे। जो हिंसा, असत्य, स्तये, अब्रह्मचर्य और परिग्रह आदि के दूसरी प्रकार के तत्वों को आधार बनाकर चलेंगे वे दूसरे प्रकार की संस्कृति को जन्म देंगे। इन दोनों का क्षेत्र संस्कृति होगी–एक ऊँची संस्कृति दूसरी नीची संस्कृति परन्तु उसे सभ्यता नहीं कहा जायेगा। सभ्यता का सम्बन्ध अहिंसा-हिंसा से, सत्य-असत्य से, अस्तेय-सत्ये से, ब्रह्मचर्य से, अपरिग्रह-परिग्रह से नहीं। एक व्यक्ति पैसे वाला है बड़े भारी मकान में रहता है, दो-चार कारें है, पाँच-दस नौकर चाकर हैं, घर में टीवी, फ्रिज, कूलर आदि है परन्तु परले दर्जे का झूठा, बेईमान, दुराचारी, शराबी है, वह सभ्य है परन्तु सु-संस्कृत नहीं। ऊँचे अर्थों में उसके पास सभ्यता है, संस्कृति नहीं, और अगर उसके पास कोई संस्कृति है तो वह नीची संस्कृति, आसुरी संस्कृति है क्योंकि वह अहिंसा के स्थान में हिंसा को, सत्य के स्थान में असत्य को, अपरिग्रह के स्थान में परिग्रह को जीवन का आधार बनाये हुए है। नीची आसुरी संस्कृति-ऐसी संस्कृति को जो झूठ बेईमानी, ईर्ष्या, द्वेश, घृणा आदि पर खड़ी हो कोई संस्कृति नहीं कहता। इसीलिए हम भी इस प्रकार की संस्कृति

के लिए संस्कृति शब्द का प्रयोग नहीं करेंगे। इस दृष्टि से कोई भी व्यक्ति सभ्य होता हुआ असंस्कृत हो सकता है और सुसंस्कृत होता हुआ असभ्य हो सकता है, क्योंकि सभ्यता बाहर की चीज है, संस्कृति अच्छी हो या बुरी हो आध्यात्मिक है और भीतर की चीज है। विश्वामित्र ऋषि जंगल में एक पर्ण कुटिया में रहते थे, वशिष्ठ ऋषि चर्म पहनते थे, महाराज रामचन्द्र घोड़े के रथ पर सवारी करते थे, सभ्यता की दृष्टि से आजकल के महलों में रहने वालों, मिलों का मुलायम कपड़े पहनने वालों, हवाई जहाज की सवारी करने वालों से बहुत नीचे थे परन्तु संस्कृति की दृष्टि से आजकल के लोगों से बहुत ऊँचे थे। क्योंकि आत्मत्व को निखारने वाले, नीचे को ऊँचा बनाने वाले, मनुष्य को मनुष्य बनाने वाले उनके संस्कार रोम-रोम में बसे हुये थे।

सभ्यता और संस्कृति साथ-साथ भी चल सकती हैं। एक दूसरे के बिना भी रह सकती हैं। यह हो सकता है कि एक देश भौतिक दृष्टि से अत्यन्त उन्नत हो, उसके रेल, वायुयान, तार, टेलिविजन, मोटर कार सब कुछ हों और साथ ही उस देश के वासी अहिंसा, सत्य, अस्तये, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि के आध्यात्मिक तत्वों को भी जीवन का मुख्य सूत्र समझते हों। यह तो सबसे ऊँची अवस्था है, आदर्श स्थिति है। इस अवस्था में उसे देश की सभ्यता तथा संस्कृति दोनों ऊंची कही जायगी। यह भी हो सकता है कि एक देश भौतिक दृष्टि से वह बहुत नीचा हो। वहाँ मोटर कारें हों, परन्तु मोटर कारों पर बैठकर लोग डाके डालते हों, टेलिविजन हों परन्तु उन पर अश्लील और गन्दे ही गाने पाये जाते हों। इस अवस्था में उस देश की सभ्यता ऊँची, परन्तु संस्कृति नीची कही जायगी। यह भी हो सकता है कि एक देश भौतिक-दृष्टि से नीचे स्तर में हो, परन्तु आत्मिक स्तर में बहुत ऊँचा उठा हुआ हो। उस देश के वासी दूसरे के दुःख में दुःखी होते हों, दूसरे के कल्याण के लिये अपने स्वार्थ को तिलांजलि देते हों, झूठ, बेईमानी, दुराचार से दूर रहते हों, परन्तु वे मोटर कारों के बजाय बैलगाड़ियों में चलते हों, महलों के बजाय झोपड़ों में रहते हों। इस अवस्था में वह देश सभ्यता में भले ही पिछड़ा हुआ गिना जाय, परन्तु संस्कृति में उस देश के सामने सिर झुकाना पड़ेगा।

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सभ्यता तथा संस्कृति में ऊँचा स्थान संस्कृति का है-ऐसी संस्कृति का जिसके आधार में सचाई, ईमानदारी, संतोष, संयम, प्रेम आदि आध्यात्मिक तत्व काम कर रहे हों। रेल, तार, टेलिविजन की इतनी आवश्यकता नहीं, जितनी सचाई, ईमानदारी, संयम और विश्व प्रेम की। दोनों का होना सबसे अच्छा, परन्तु दोनों न हों तो संस्कृति का होना सभ्यता से अच्छा है। सभ्यता को संस्कृति की रक्षा के लिये छोड़ा जा सकता है, संस्कृति को सभ्यता की रक्षा के लिये नहीं छोड़ा जा सकता। आत्मा के लिये शरीर को

छोड़ा जा सकता है, शरीर के लिए आत्मा को कैसे छोड़ा जा सकता है।

विचार आता है कि संस्कृति उत्पन्न कैसे होती है। संस्कृति का उद्‌भव जाति के जीवन के किस ऐसे सशक्त विचार से होता हे जो उस जाति के जीवन रूपी वृत्त का मानो केन्द्र होता है, उस जाति के विकास की सम्पूर्ण धारा उसी विचार रूपी स्रोत से मानो प्रवाहित होती है। जिस जाति के पास उसके जीवन की विकसित करने वाला ऐसा सशक्त केन्द्रीय विचार नहीं होता, उस जाति की संस्कृति शून्य के बराबर होती है, जिसके पास होती है उसकी संस्कृति उस जाति को सैकडों में एक बना देती है। संस्कृति का प्रवाह जीवन के किसी केन्द्रीय विचार से प्रस्फुटित होता है। यह विचार ऐसा होता है जैसे शरीर में आत्मा। आत्मा से शरीर का जीवन है, उस केन्द्रीय विचार से संस्कृति का जीवन है। यह विचार जितना प्रबल होगा उतनी संस्कृति प्रबल होगी, प्राणवती होगी। यह विचार जितना निर्बल होगा उतनी संस्कृति निर्बल होगी, प्राणहीन होगी। संसार में एक नहीं अनेक संस्कृतियां आयीं और नष्ट हो गयीं, इसलिये क्योंकि उन संस्कृतियों का केन्द्रीय विचार निर्बल पड़ गया, संसार में विचारों के संघर्ष में वह टिक नहीं सका। जिस जाति के जीवन में कोई केन्द्रीय-विचार नहीं होता, ऐसा विचार नहीं होता जिसके लिये वह जाति जीती-मरती है, वह संसार में विजय प्राप्त करती हुई भी उस जाति के सम्मुख सिर झुका देती है जिसे इसने जीता होता है। जिस जाति के जीवन में कोई केन्द्रीय विचार होता है, ऐसा विचार होता है जो उसे मरते-मरते भर जिन्दां रख सके वह पराजित नहीं होती हुई विजेताओं के सामने सिर नहीं झुकाती। मिस्र, ग्रीस, रोम, बैबीलान की संस्कृतियां नष्ट हो गयीं। नष्ट हुई इसलिय क्योंकि जिस विचार ने इन ईट-पत्थरों को खड़ा किया था, जिस विचार ने मिस्र को मिस्र, यूनान को यूनान और रोम को राम बनाया था वह समाप्त हो गया-आत्मा चला गया, शरीर रह गया, परन्तु संस्कृति तो आत्मा है शरीर नहीं, इसलिये शरीर के रह जाने पर भी आत्मा के न होने के कारण उन देशों का होना न होना बराबर है। भारत सदियों तक पराधीन रहा, इस पराधीनता को भारत के शरीर ने माना, इसके आत्मा ने नहीं माना। क्यों नहीं माना? इसलिये क्योंकि भारतीय संस्कृति के आधार में कोई ऐसा केन्द्रीय विचार था, जो दबाये दब नहीं सका, मिटाये मिट नहीं सका, हटाये हट नहीं सका।

वह केन्द्रीय विचार क्या था? भारत की संस्कृति के प्राण वेद रहे हैं। वेदों के व्याख्यान उपनिषद्, ब्राह्मण ग्रन्थ के साथ-साथ भगवत गीता रही है। यहां की संस्कृति का मूल मंत्र वहीं विचार था जिसका वेद के ऋषियों ने गान किया, जिसका उपनिषदों के ऋषियों ने उपदेश दिया था जिसका गीता में श्रीकृष्ण ने प्रतिपादन किया था।

भारत ऋषियों की तपस्थली रही है। यहाँ विदेशी भी वेद का स्वाध्याय करने आया करते थे। महाभारत काल के बाद वेद शिक्षा लुप्त सी हो गई। वेद के नाम से मनुष्य कृत ग्रन्थों का प्रचलन सा होने होने लगा। इसी क्रम में पुराणों की महिमा का महर्षि व्यास के नाम से प्रचलन हुआ। जिससे वेद शिक्षा समाप्त हो गई। पुराणों के श्लोक बनाम वेद मंत्र नाम से जनता को भ्रमित किया गया।

हमारा सौभाग्य रहा कि 18वीं शती में एक बालक कर्शनजी तिवारी जी के घर टंकारा ग्राम गुजरात में पैदा हुआ जिसका नाम मूल शंकर रखा गया था। यह बालक कुशाग्र बुद्धि का था। उसके पिता जी के द्वारा उससे शिवरात्रि का व्रत रखवाया गया। अर्द्धरात्री में जब सभी शिवभक्त निद्रा की गोद में चले गये तब भी मूल शंकर जगा हुआ था और शिवपिंडी को टकटकी निगाह से निहार रहा था। निद्रा से जब आंखें बन्द होने लगती तो जल के छींटे मारकर जगे रहने की प्रतिज्ञा ली थी। तभी चूहों के आतंक ने शिवपिंडी पर चढ़ाये प्रसाद को खाना शुरू किया और उछलकूद मचाने लगे तथा उस पिंडी के ऊपर मलमूत्र त्याग कर दिया तो मूल शंकर विस्मयपूर्वक यह देख रहा था। उसके मन में यह बात आई कि जब यह शिव चूहों को नहीं हटा सकता है तो यह सर्व शक्तिमान केसे हो सकता है। उसकी उस पिंडी में शिव की आस्था एकदम समाप्त हो गई और अपने पिता जी को सब वृतान्त कह सुनाया। पिता जी ने कहा यह असली शिव नहीं है यह तो उसका प्रतिरूप है असली शिव तो कैलास पर्वत पर निवास करते हैं। पिता की यह बात सुनकर बालक मूलशंकर ने कहा पिता जी मुझे घर छोड़ दीजिए मुझे यहाँ मन्दिर रहकर क्या करूं जब असली शिव के दर्शन दुर्लभ हैं तो पिता जी ने क्रोध में आकर कहा नहीं तुझे प्रात:काल तक यहीं रहना होगा। परन्तु बालक मूलशंकर नहीं माना। तब पिता ने अपने घुड़सवार को बुलवाया और बालक मूलशंकर को घर भेज दिया। उसके बाद मूलशंकर शिव की खोज में घर से भाग निकला। पहली बार पकड़ा भी गाया। इसी बीची उसकी बहिन और चाचा की मृत्यु हो गई जिससे वह काफी घबरा गया था और सोचने लगा क्या इसी प्रकार उसे भी एक दिन मृत्यु का ग्रास बनना पड़ेगा। अब उसके पास दो लक्ष्य हो गये। पहला सच्चे शिव को पाना, दूसरा अमरत्व प्राप्त करना। फिर जब वह घर से निकला तब कभी वापस अपने घर नहीं लौटा। उत्तराखण्ड की पहाड़ियों में कहीं भी सच्चा गुरु मिल जाये इसी चाह में घूमता रहा। परन्तु मन की तृप्ति नहीं हुई। अन्त में मथुरा में स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी के सानिध्य में रहकर ढाई वर्ष तक वेदाध्ययन करने के पश्चात् गुरु से आज्ञा लेकर संसार के उपकार के लिए निकल पड़ा। योगसाधना से शिव अर्थात् परमात्मा का आत्मसात तो हो ही गया था। उस समय देश में कुरीतियों, अन्धविश्वास, मूर्तिपूजा, पाखण्ड, भूतप्रेत का पूजना, मन्दिरों में बलि प्रथा, पंडितो द्वारा भोली भाली जनता को अपने मायाजाल में फंसाकर गुमराह करके उनसे धन ऐठना, ज्योतिष के नाम पर लोगों को झूठी

कहानियाँ गढ़कर डरा-धमकाकर धन ऐंठना आदि अनेक प्रकार के कुरीतियाँ इस देश में फैली हुई थीं। पंडितों ने यह प्रचार कर रखा था कि वेद को भांकासुर नामक राक्षस ले गया है। इसलिए मनमाना आचरण देश में फैला हुआ था। जो आज भी बदस्तूर जारी है।

मूलशंकर ने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी ने सन्यास ग्रहण किया और उनका नाम स्वामी दयानन्द सरस्वती रखा गया। स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने पूरे भारत में वेद का प्रचार-प्रसार किया। कई शास्त्रार्थ बड़े-बड़े पंडित महाराथियों से किये और उनको वेद के तर्क के कोड़े लगाकर परास्त किया। अन्धविश्वास, मूर्तिपूजा का खण्डन, फलित ज्योतिष केवल गप्प है, बलिप्रथा अवैदिक है, भूतप्रेत का वास्तविक अर्थ बताया अर्थात् जो पहले था अब वर्तमान में नहीं है वह भूत, भूत प्राणीमात्र को भी कहा जाता है, प्रेत कहते हैं मृत शरीर को, नारी को पूजनीय माना, गौ माता का पालन और रक्षा हो, बलि प्रथा का अन्त होना चाहिए, सभी प्राणियों के साथ मित्रभाव रखना चाहिए, सत्याचरण, एक ईश्वर की उपासना, वेद के अनुसार ईश्वर का निज नाम ओम् बताया और कहा परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव से असंख्य नाम हैं ये सब नाम ओम् में आ जाते हैं, प्रातः सायं कम-से-कम एक-एक घण्टा परमात्मा का ध्यान करना चाहिए, संन्ध्या-हवन हर घर में प्रतिदिन हो इत्यादि अनेक सुधार के कार्य किये। हिन्दी को स्वामी जी आर्यभाषा कहा करते थे। उन्होंने अपने सभी ग्रन्थ हिन्दी में ही लिखे हैं। उनमें से अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश है। यह ग्रन्थ सभी शंकाओं अर्थात् व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि का तर्क के साथ समाधान करता है। उन्होंने सन् 1875 में आर्यसमाज नामक संस्था स्थापित की जिसका कार्य वेद का प्रचार-प्रसार करना है।

आर्यसमाज के लिए दस नियम निर्धारित किए-

पहला नियम-सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है। **दूसरा नियम**-ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य और पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसकी की उपासना करनी योग्य है। **तीसरा नियम**-वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यो का परमधर्म है। **चौथा नियम**-सत्य के ग्रहण करने व असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। **पांचवा नियम**-सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए। **छठा नियम**-संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। **सातवां नियम**-सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य

वर्तना चाहिए। **आठवां नियम**–अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए। **नवां नियम**–प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। **दसवां नियम**–सब मनुष्यों को सामाजिक-सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

संसार का कोई भी मनुष्य चाहे वह किसी भी मत अथवा पंथ का मानने वाला क्यों न हो उक्त किसी भी नियम को मानवता की दृष्टि से गलत नहीं ठहरा सकता।

ऋषि कहते हैं–तर्क को। ऋषि वेद का दृष्टा होता है। इसलिए हम स्वामी दयानन्द सरस्वती को ऋषि-महर्षि कहकर उनका आदर सम्मान करते हैं। यजुर्वेद का पूरा भाष्य हिन्दी में किया, वेद के आधुनिक भष्याकारों में सबसे प्रथम ध्यान महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज पर जाता है जिन्होंने यजुर्वेद का संपूर्ण भाष्य तथा ऋग्वेद के सातवें मण्डल के कुल 108 सूक्तों में से लगभग आधे 62वें सूक्त के दूसरे मन्त्र तक विधिवत भाष्य किया है। निरूक्तकार ने वैदिक शब्दों के अर्थों को यौगिक प्रणाली (धातु के मूल अर्थ को आधार मानकर किए हैं न कि रूढ़ि, प्रसिद्धि अथवा प्रथा) के आधार पर। दयानन्द ने अपनी व्याख्या निम्नलिखित मूल सिद्धांतों को मुख्य रखकर की–

1. वेद धार्मिक, नैतिक और वैज्ञानिक सत्य का एक पूर्ण ईश्वर प्रेरित ज्ञान है।

2. वेद की धार्मिक शिक्षा एक देवतावाद की है और वैदिक देवता एक ही देव के भिन्न-भिन्न वर्णनात्मक नाम हैं अर्थात् अनेक देव एक परमदेव में आ जाते हैं।

3. वे विभिन्न देवता उस परमदेव की उन शक्तियों के भी सूचक हैं जिन्हें कि हम प्रकृति में कार्य करता हुआ देखते हैं।

इस तरह से दयानन्द ने वेद की साधारणतया प्रचलित व्याख्याओं को ललकारा और इन्हें नया मोड़ दिया।

महर्षि वेद के बाकी सभी मंत्रों का भाष्य कर पाते उससे पूर्व की उनको विष देकर उनका शरीरान्त कर दिया। वे देश व जाति के लिए बलिदान हो गये। यदि महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज इस धरती पर नहीं आते तो आज भी हम ईश्वर की वाणी वेद से कोसों दूर रहते और हम अभी भी गुलामों की सी जिन्दगी व्यतीत करते हुए होते। आज हम कह सकते हैं हमारी संस्कृति वैदिक संस्कृति थी और है। इसीलिए हमने कहा है कि सभ्यता को संस्कृति की रक्षा के लिए छोड़ा जा सकता है परन्तु संस्कृति को सभ्यता के लिए नहीं छोड़ा जा

सकता। आत्मा शरीर के बिना रह सकती है परन्तु शरीर आत्मा के बिना कैसे रह सकता है।

आज हमें गर्व है तो अपनी वैदिक संस्कृति पर जिससे हम जीवित है। वैदिक संस्कृति यथार्थवादी संस्कृति है। जिसका पुन: साक्षात्कार हमें महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने हमें कराया है। हम उस ऋषि के सदा ऋणी रहेंगे। हम तो यहीं कहेंगे जब तक सूरज चाँद रहेगा तब तक महर्षि दयानन्द तुम्हारा नाम रहेगा। ओम् शम्।

नोट–उक्त लेख में हमने कुछ अंश विद्यामार्तण्ड डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार जी द्वारा लिखित पुस्तक वैदिक संस्कृति के मूलतत्व से लिए हैं।

विश्व शान्ति का मूल मन्त्र मानवता है

–आचार्य वेदसिन्धु आर्यन् हैदराबाद, तेलंगाना

आज विश्व में चारों ओर अशांति है, विश्व भयंकर युद्ध की ओर तेजी से आगे बढ़ रहा है। आतंकवाद एक काल सर्प के रूप में मानव जाति के लिए खतरा बन गया है। ऐसे में विश्व में शान्ति के उपाय करना अत्यन्त आवश्यक हो गया है। कहीं मत और सम्प्रदाय का झगड़ा है तो कहीं देश के नाम पर और कहीं भाषा और जाति के नाम पर मतभेद हैं, जिसके कारण विश्व में भक्ति, विश्वास, सदाचार, दया के स्थान पर अविश्वास, द्वेष, दुराचार, अत्याचार और अनाचार ने जगह बना लिया है, जो मानवता के लिए बहुत बड़ी समस्या है। इस समस्या का समाधान केवल "मानवता की रक्षा" ही हो सकती है। "मानवता की रक्षा" अच्छे संस्कारों से हो सकती है, संस्कारों की रक्षा अच्छी संस्कृति से संभव है। इसलिए अच्छी संस्कृति का विकास करना मनुष्य का नि:स्वार्थ रूप से परम कर्तव्य होना चाहिए, तभी मानवता की रक्षा हो सकती है। आज की परिस्थिति यह है कि भोजन सभी को चाहिए परन्तु खेती करना कोई नहीं चाहता, पानी सभी को चाहिए परन्तु पानी बचाना कोई नहीं चाहता, दूध सभी को चाहिए परन्तु गाय पालना कोई नहीं चाहता, छाया सभी को चाहिए परन्तु पेड़ लगाना कोई नहीं चाहता, इसी प्रकार सुख और शान्ति सभी को चाहिए परन्तु सुख व शान्ति पाने का काम कोई नहीं करना चाहता है।

आज के परिप्रेक्ष्य में मानवता विश्व शान्ति का मूल मन्त्र कैसे हो सकता है? आइए इस पर विचार करें।

आज विश्व में अनेक देश, मत, सम्प्रदाय, भाषाएँ, जातियाँ, संस्कृतियाँ हैं आज का मनुष्य अपने देश, मत, सम्प्रदाय आदि के विषय में गंभीरता या

कट्टरता से सोच रहा है, परन्तु मानवता को भूल रहा है और मानवता से दूर होता जा रहा है, जिसके बिना मनुष्य को मनुष्य नहीं कहा जा सकता है। जिस प्रकार शक्कर में मिठास न हो, वह शक्कर केवल पाउडर मात्र रह जाती है, नमक नमकीन न हो तो वह भी व्यर्थ का पाउडर मात्र है, उसी प्रकार जिस मनुष्य में मानवता नहीं होती, वह मनुष्य नहीं, निरा पशु समान है। सारे देश किसी न किसी मत, भाषा और संप्रदाय के पक्ष में खड़े होकर दूसरे देश, मत, भाषा, सम्प्रदाय और जाति का विरोध कर उससे संबन्धित मनुष्यों के साथ अत्याचार, दुराचार और अनाचार कर मानवता की हत्या कर रहे हैं।

आज आतंकवाद जिस रूप में हमारे सामने है, वह सब जानते हैं। वे मनुष्य होकर भी मनुष्य को ही क्रूरता से मौत के घाट उतार रहे हैं। उनमें मानवता लेशमात्र भी नहीं है। मानव दानव बना हुआ है। यदि हम सारे मनुष्य मिलकर उन आतंकवादियों को मानवता का पाठ पढ़ाने में सफल हो जायें तो शान्ति की स्थापना संभव हो सकेगी।

किसी जाति अथवा धर्म विशेष के सम्प्रदाय को ही महत्वपूर्ण मानना, अन्य जाति अथवा धर्म के प्रति तिरस्कार भाव उत्पन्न होना ही साम्प्रदायिकता है। मानव के लिये कोई भी जाति अथवा धर्म तुच्छ नहीं है, परन्तु साम्प्रदायिकता का भाव अवश्य मानवता के लिए शत्रु है। हमें किसी भी जाति अथवा धर्म का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। इस पृथिवी पर प्रत्येक मनुष्य ईश्वर की सन्तान है। प्रत्येक दृष्टिकोण से सम्पूर्ण मानव जाति एक समान है। जाति, धर्म अथवा सम्प्रदाय विशेष मनुष्य के स्वनिर्मित हैं। विभिन्न सम्प्रदाय अथवा धर्मों के पर्व, रीति-रिवाज भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, परन्तु प्रत्येक धर्म के मूल में मानवता का हित विद्यमान है।

किसी भी सम्प्रदाय या धर्म विशेष को मानना गलत नहीं है, परन्तु सम्प्रदाय विशेष के प्रति मानवता की बलि चढ़ाना स्पष्टत: सम्पूर्ण मानव जाति के लिए अहितकर है। हम किसी भी धर्म को मानने के लिए स्वतन्त्र हैं, परन्तु वास्तव में मानवता ही हमारा सबसे बड़ा धर्म है। साम्प्रदायिकता के कारण वैमनस्य उत्पन्न करने में राजनीतिक एवं धार्मिक नेताओं ने निष्ठुरता से मानवता को कुचला है। मानव होने के नाते यह हम सब का विशिष्ट कर्तव्य है कि हम समाज को साम्प्रदायिकता के जहर से विषाक्त न होने दें।

कोई हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई सच्चा मतावलम्बी या सच्चा धर्मावलम्बी हो सकता है, परन्तु उस मतावलम्बी या धर्मावलम्बी में मानवता हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती है। इसके विपरीत एक सच्चा मनुष्य अर्थात् जिस मनुष्य में मानवता हो, वह नि:सन्देह और निश्चित रूप से एक सच्चा मनुष्य

और एक सच्चा मतावलम्बी या धर्मावलम्बी बन सकता है। इसीलिए, यह अत्यन्त आवश्यक है कि विश्व के सभी मनुष्यों को मानवता का पाठ पढ़ायें। मत या ध र्म को ऊपर न मानकर मानवता को सर्वोपरि मानेंगे तो विश्व में शान्ति की स्थापना अवश्य होगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

कहीं भाषा के नाम पर झगड़ा है। आज मनुष्य भाषा को भी किसी विशेष मत या धर्म के साथ जोड़ कर अन्य भाषा-भाषी लोगों के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार कर रहे हैं। यह मेरी भाषा है और यह दूसरों की भाषा है, ऐसा मानकर जो दूसरी भाषा बोलते हैं, उन्हें उनके साथ अपनों सा व्यवहार तो दूर एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के साथ जो व्यवहार करना चाहिए वह व्यवहार भी नहीं कर रहा है अपितु उनके साथ क्रूरता से व्यवहार करते हैं। यह भी विश्व की बहुत बड़ी समस्या बन गयी है। ऐसे में विश्व के सारे बुद्धिजीवी, भाषाविद् और राजनेता आदि लोगों को चाहिए कि सामान्य लोगों को "भाषा तो भाषा होती है, भाषा किसी मत या धर्म की और जाति की नहीं होती है, मनुष्य कोई भी भाषा बोलें मनुष्य तो मनुष्य होता है" को समझाने की आवश्यकता है, तभी विश्व में शान्ति की स्थापन हो सकती है।

इस समस्या का एक मात्र सुनिश्चित व सुदृढ़ उपाय भगवान प्रदत्त वेदों के द्वारा प्रतिपादित "मानवता" रूपी धर्म ही है। **"मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्"** इस वेद की उक्ति को सार्थक करना ही होगा। सारे देश के प्रतिनिधियों, सारे मत प्रवाचकों, धर्मगुरुओं, विश्व के सभी बुद्धिजीवियों और मीडिया को एक होकर विश्व शान्ति के मूल मन्त्र "मानवता" को सुदृढ़ करना चाहिए।

मनुष्य शरीर मिलने पर भी छः प्रकार की पशुता जन्म से ही लगी चली आती है–काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य। जब तक हम इन दुर्गुणों का विनाश नहीं कर लेते, चाहे हमारा शरीर मनुष्य का भले ही रहे, हम काम वही करेंगे जो उन बुराइयों के दबाव में पशु और पक्षी करते हैं, इसलिए ऋग्वेद में एक मंत्र कहता है कि–

वनेम पूर्वीरर्यो मनीषा अग्निः सुशोको विश्वान्यश्याः।
आ दैव्यानि व्रता चिकित्वाना मानुषस्य जनस्य जन्म॥

(ऋग्.०१/७०/१)

सर्वप्रथम यह कि संसार के व्यवस्थापक प्रभु के दिव्य गुणों को मनुष्य समझे; दूसरे यह कि उन गुणों को समझकर अपने जीवन में धारण करे, तभी इस शरीर में मनुष्यता का जन्म होता है, केवल मानव-आकृति धारण करने से नहीं। आज संसार को सुख और शान्ति का धाम बनाने का प्रयत्न तो हो रहा है, किन्तु मानवता की प्राप्ति के लिए जिस संयम और त्याग की आवश्यकता है, उस

ओर लोगों का ध्यान ही नहीं है। इसलिए संसार को सुख और शान्ति का धाम बनाने के लिए सर्वप्रथम मनुष्य को मनुष्य बनना आवश्यक है। इस संदर्भ में मुझे एक कहानी याद आ रही है।

एक बार एक छोटा बच्चा घर में अपने पिता को काम नहीं करने दे रहा था, परेशान कर रहा था तो पिता ने दो-तीन बार मना किया परन्तु बच्चे कहाँ मानते हैं? इतने में पिता को एक उपाय सूझा। कमरे की दीवार पर संसार का एक मानचित्र टंगा हुआ था, उसने उसको फाड़कर टुकड़े कर दिए और बच्चे के सामने फेंकते हुए कहा–"इस संसार को जोड़कर दिखाओ।" बच्चा उन टुकड़ों को जोड़ने में लग गया। घण्टों हो गए, किन्तु टुकड़े जुड़ नहीं पा रहे थे, बच्चा परेशान हुआ। इतने में वायु के झोकों से नक्शे का एक टुकड़ा उड़कर उलटा हो गया। बच्चे ने देखा कि उस टुकड़े के पीछे हाथ का पंजा बना हुआ था।

उसने यह देखकर कुतूहलवश सारे टुकड़े पलट डाले तो उन सभी पर मनुष्य के चित्र का कोई-न-कोई भाग था। बच्चे ने संसार के नक्श को जोड़ने की चिन्ता छोड़कर मनुष्य का चित्र जोड़ना प्रारम्भ किया तो पांच मिनट में चित्र के सब अङ्ग यथास्थान जोड़ दिये और मनुष्य का पूरा चित्र जुड़ गया। फिर उस चित्र को पलटकर देखा तो मनुष्य के चित्र के बनने के साथ विश्व का नक्शा भी बन चुका था, अत: विश्व को बनाने का रहस्य भी इसी में है। संसार को सुखद बनाने के लिए प्रथम मनुष्य का निर्माण आवश्यक है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के द्वारा प्रतिपादित आर्यसमाज के दस नियमों में जैसे–नियम 4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। नियम 5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करना चाहिए। नियम 9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नती से अपनी उन्नति समझनी चाहिए। नियम 10. सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी, नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें। जो मानवता का सृजन करने में पूर्णत: सक्षम हैं। यदि उन्हें प्रत्येक मनुष्य दृढ़ निष्ठा और विश्वास से अपने जीवन में सार्थक कर लें तो विश्व शान्ति की स्थापना शत प्रतिशत सम्भव है।

अन्त में दो पंक्तियों को कहकर यह आशा करता हूँ कि विश्व के सारे लोग विश्व में मानवता की स्थापना करने के लिए तन मन धन से प्रयत्न कर शान्ति की स्थापना करेंगे।

क्या करेगा प्यार वह भगवान से, कर न पाया प्यार जो कर्तव्य से।
और जन्म पाकर गोद में इन्सान की कर न पाया प्यार जो इन्सान से॥

जीवात्मा-आत्मा-रुह का परिचय

आत्मा अति सूक्ष्म है, परमाणुओं से भी सूक्ष्म।

जो भी इकाइयां हैं चाहे नैनो मीटर, पिको मीटर आदि उनसे भी सूक्ष्म। एक सुई की नोक से भी कम जगह पर विश्व की सभी आत्माएं रखी जा सकती हैं। अत: उसे देखा ही नहीं जा सकता। आत्मा के रहने के स्थान के विषय में ऋषियों ने तीन सथान बताये हैं हृदय, मस्तिष्क, कंठ।

1. **प्रश्न**–जीवात्मा किसे कहते हैं? **उत्तर**–एक ऐसी वस्तु जो अत्यंत सूक्ष्म है, अत्यंत छोटी है, एक जगह रहने वाली है, जिसमें ज्ञान अर्थात् अनुभूति का गुण है, जिस में रंग, रूप, गंध, भार (वजन) नहीं है, कभी नाश नहीं होता, जो सदा से है और सदा रहेगी, जो मनुष्य, पशु, पक्षी आदि का शरीर धारण करती है तथा कर्म करने में स्वतंत्र है उसे जीवात्मा कहते हैं।

2. **प्रश्न**–जीवात्मा के दु:खों का कारण क्या है? **उत्तर**–जीवात्मा के दु:खों का कारण मिथ्याज्ञान है।

3. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा स्थान घेर सकती है? **उत्तर**–नहीं जीवात्मा स्थान नहीं घेरती। एक सुई की नोक पर विश्व की सभी जीवात्माएँ आ सकती हैं।

4. **प्रश्न**–जीवात्मा की प्रलय में क्या स्थिति होती है क्या उस समय उसमें ज्ञान होता है? **उत्तर**–प्रलय अवस्था में बद्ध जीवात्माएँ मूर्च्छित अवस्था में रहती हैं। उसमें ज्ञान होता है परंतु शरीर, मन आदि साधनों के अभाव से प्रकट नहीं होता।

5. **प्रश्न**–प्रलय काल में मुक्त आत्माएं किस अवस्था में रहती हैं? **उत्तर**–प्रलय काल में मुक्त आत्माएँ चेतन अवस्था में रहती है और ईश्वर के आनन्द में मग्न रहती हैं।

6. **प्रश्न**–जीवात्मा के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं? **उत्तर**–आत्मा=जीव, इन्द्र, पुरुष, देही, उपेन्द्र, वेश्वानर आदि अनेक नाम वेद आदि शास्त्र में आये हैं।

7. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा अपनी इच्छा से दूसरे शरीर में प्रवेश कर सकता है? **उत्तर**–सामान्यता नहीं कर सकता, अपवाद रूप में मुक्त व योगी आत्मायें कर सकती हैं।

8. **प्रश्न**–मुक्ति का समय कितना है? **उत्तर**–1. महाकल्प ऋग्वेद 1. मंडल, 24 सूक्त, 2. मन्त्र के अनुसार (31 नील 10 खरब 40 अरब वर्ष मुक्ति का समय है।

9. **प्रश्न**–जीवात्मा स्त्री है या पुरुष है या नपुंसक है? **उत्तर**–जीवात्मा तीनों भी नहीं। ये लिंग तो शरीरों के हैं।

10. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा ईश्वर का अंश है? **उत्तर**–नहीं, जीवात्मा ईश्वर का अंश नहीं है। ईश्वर अखण्ड है उसके अंश टुकड़े नहीं होते हैं।

11. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा का कोई भार, रूप, आकार, आदि है। **उत्तर**– नहीं।

12. **प्रश्न**–जीवात्मा की मुक्ति एक जन्म में होती है या अनेक जन्म में होती है? **उत्तर**–जीवात्मा की मुक्ति एक जन्म में नहीं अपितु अनेक जन्मों में होती है।

13. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा मुक्ति में जाने के बाद पुनः संसार में वापस आता है? **उत्तर**–जी हाँ। जीवात्मा मुक्ति में जाने का बाद पुनः शरीर धारण करने के लिए वापस आता है।

14. **प्रश्न**–जीवात्मा के लक्षण क्या हैं? **उत्तर**–जीवात्मा के लक्षण इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ज्ञान, सुख, दुःख की अनुभूति करना है।

15. **प्रश्न**–मेरा मन मानता नहीं, यह कथन ठीक है? **उत्तर**–नहीं, जड़ मन को चलाने वाला चेतन जीवात्मा है।

16. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा कर्मों का फल स्वयं भी ले सकता है? **उत्तर**–हाँ। जीवात्मा कुछ कर्मों का फल स्वयं भी ले सकता है जैसे चोरी का दण्ड भर कर। किंतु अपने सभी कर्मों का फल जीवात्मा स्वयं नहीं ले सकता है।

17. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा कर्म करते हुए थक जाता है? **उत्तर**–नहीं, जीवात्मा कर्मों को करते हुए थकता नहीं है अपितु शरीर, इन्द्रियों का सामर्थ्य घट जाता है।

18. **प्रश्न**–जीवात्मा में कितनी स्वाभाविक शक्तियाँ हैं? **उत्तर**–24 स्वाभाविक शक्तियाँ हैं।

19. **प्रश्न**–शास्त्रों में आत्मा को जानना क्यों आवश्यक बताया गया है। **उत्तर**–जीवात्मा के स्वरूप को जानने से शरीर, इन्द्रियाँ और मन पर अधिकार प्राप्त हो जाता है, परिणाम स्वरूप आत्मज्ञानी बुरे कर्मों से बच कर उत्तम कार्यों को ही करता है।

20. **प्रश्न**–जीवात्मा का स्वरूप (गुण, कर्म, स्वभाव, लम्बाई, चौड़ाई, परिमाण क्या है? **उत्तर**–जीवात्मा अणु स्वरूप, निराकर, अल्पज्ञ, अल्पशक्तिमान है, वह चेतन है और कर्म करने में स्वतंत्र है, बाल की नोंक के दस हजारवें भाग से भी सूक्ष्म है। यह अपनी विशेष स्वतंत्र सत्ता रखता है।

21. **प्रश्न**–जीवात्मा शरीर में कहाँ रहता है? **उत्तर**–जीवात्मा मुख्य रूप से शरीर में स्थान विशेष जिसका नाम हृदयादेश है, वहाँ रहता है किन्तु गौण रूप से नेत्र, कण्ठ इत्यादि स्थानों में भी वह निवास करता है।

22. **प्रश्न**–क्या (मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट पंतग आदि के शरीरों में जीवात्मा भिन्न-भिन्न होते हैं या एक ही प्रकार के होते हैं? **उत्तर**–आत्मा तो अनेक हैं किन्तु हर एक आत्मा एक समान है। मनुष्य, पशु, पक्षी आदि कीट पतंग के शरीरों में भिन्न-भिन्न जीवात्माएं नहीं किन्तु एक ही प्रकार की जीवात्माएं है।

शरीरों का भेद है आत्माओं का नहीं।

23. **प्रश्न**–जीवात्मा शरीर क्यों धारण करता है? कब से कर रहा है और कब तक करेगा? **उत्तर**–जीवात्मा, अपने कर्मफल को भोगने और मोक्ष को प्राप्त करने के लिए शरीर को धारण करता है। संसार के प्रारम्भ से यह शरीर धारण करता आया है और जब तक मोक्ष को प्राप्त नहीं करता तब तक शरीर धारण करता रहेगा।

24. **प्रश्न**–क्या मरने के बाद जीव भूत, प्रेत, डाकन आदि भी बनकर भटकता है? **उत्तर**–मरने के बाद जीव न तो भूत, प्रेत बनता है और न ही भटकता है। यह लोगों के अज्ञान के कारण बनी हुई मिथ्या मान्यता है।

25. **प्रश्न**–शरीर में जीवात्मा कब आता है? **उत्तर**–जब गर्भ धारण होता है तभी जीवात्मा आ जाता है। कुछ विद्वानों की धारणायें हैं कि तीसरे महीने में अथवा 8 या 9 वें महीने में आता है।

26. **प्रश्न**–एक ही है क्या जीव और ब्रह्म? अथवा क्या 'आत्मा व परमात्मा' एक ही है? **उत्तर**–आत्मा और परमात्मा भिन्न अलग पदार्थ हैं जिनके गुण कर्म स्वभाव भी भिन्न हैं जीव और ब्रह्म एक ही नहीं है अपितु दोनों अलग भिन्न हैं। अतः यह मान्यता ठीक नहीं गलत है।

27. **प्रश्न**–क्या जीव ईश्वर बन सकता है? **उत्तर**–जीव कभी भी ईश्वर नहीं बन सकता है।

28. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा एक वस्तु है? **उत्तर**–हाँ, जीवात्मा एक चेतन वस्तु है, वैदिक दर्शनों में वस्तु उसको कहा गया है, जिसमें कुछ गुण, कर्म, स्वभाव होते हों।

29. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा शरीर को छोड़ने में और नए शरीर को धारण करने में स्वतंत्र है? **उत्तर**–जीवात्मा नए शरीर को धारण करने में स्वतंत्र नहीं है अपितु ईश्वर के अधीन है। जब एक शरीर में जीवात्मा का भोग पूरा हो जाता है तो ईश्वर जीवात्मा को निकाल लेता है और उसे नया शरीर प्रदान करता है। मनुष्य आत्महत्या करके शरीर छोड़ने में स्वतंत्र भी है।

30. **प्रश्न**–निराकार अणु स्वरूप वाला जीवात्मा इतने बड़े शरीरों को कैसे चलता है? **उत्तर**–बिजली जैसे–बड़े यंत्रों को चला देती है ऐसे ही निराकार होते हुए भी जीवात्मा अपनी प्रयत्न रूपी चुम्बकीय शक्ति से बड़े शरीरों को चला देता है।

31. **प्रश्न**–84 लाख योनियों में घूमने के बाद ही मनुष्य जन्म मिलता है। क्या यह मान्यता सही है? **उत्तर**–नहीं मनुष्य के मृत्यु के बाद तुरंत अथवा कुछ जन्मों के बाद मनुष्य जन्म मिल सकता है। (अपने कर्मफल भोग अनुसार)

32. **प्रश्न**–मृत्यु पश्चात शरीर छोड़ने के बाद कितने समय में जीवात्मा दूसरा शरीर धारण करता है? **उत्तर**–ईश्वर व्यवस्था के अनुसार कुछ पलों में ही

जीवात्मा शरीर छोड़ने के बाद। शीघ्र ही दूसरे शरीर को धारण कर लेता है। यह सामान्य नियम है।

33. **प्रश्न**–क्या इस नियम का कोई अपवाद भी होता है? **उत्तर** जी हाँ, इस नियम का अपवाद होता है। मृत्यु पश्चात जब जीवात्मा एक शरीर को छोड़ देता है लेकिन अगला शरीर प्राप्त करने के लिए अपने कर्मानुसार माता का गर्भ उपलब्ध नहीं होता है। तो कुछ समय तक ईश्वर की व्यवस्था में रहता है। पश्चात अनुकूल माता पिता मिलने से ईश्वर की व्यवस्थानुसार उनके यहाँ जन्म लेता है।

34. **प्रश्न**–जीवात्मा की मुक्ति क्या है और कैसे प्राप्त होती है? **उत्तर**–प्रकृति के बंधन से छूट जाने और ईश्वर के परम आनंद को प्राप्त करने का नाम मुक्ति है। यह मुक्ति वेदादि शास्त्रों में बताये गए योगाभ्यास के माध्यम से समाधी प्राप्त करके समस्त अविद्या के संस्कारों को नष्ट करके ही मिलती है।

35. **प्रश्न**–मुक्ति में जीवात्मा की क्या स्थिति होती है, वह कहाँ रहता है? बिना शरीर इन्द्रियों के कैसे चलता, खाता, पीता है? **उत्तर**–मुक्ति में जीवात्मा=स्वतंत्र रूप से समस्त ब्रह्मांड में भ्रमण करता है और ईश्वर के आनंद से आनंदित रहता है तथा ईश्वर की सहायता से अपनी स्वाभाविक शक्तियों से घूमने फिरने का काम करता है। मुक्त अवस्था में जीवात्मा को शरीरधारी जीव की तरह खाने पीने की आवश्यकता नहीं होती है।

36. **प्रश्न**–जीवात्मा की सांसारिक इच्छायें कब समाप्त होती हैं? **उत्तर**–जब ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है और संसार के भोगों से वैराग्य हो जाता है तब जीवात्मा की संसार के भोगों से वैराग्य हो जाता है तब जीवात्मा की संसार के भोग पदार्थ को प्राप्त करने की इच्छायें समाप्त हो जाती हैं।

37. **प्रश्न**–जीवात्मा वास्तव में क्या चाहता है? **उत्तर**–जीवात्मा पूर्ण और स्थायी सुख, शांति, निर्भयता और स्वतंत्रता चाहता है।

38. **प्रश्न**–भोजन कौन खाता है शरीर या जीवात्मा? **उत्तर**–केवल जड़ शरीर भोजन को खा नहीं सकता और केवल चेतन जीवात्मा को भोजन की आवश्यकता नहीं है। शरीर में रहता हुआ जीवात्मा मन-इन्द्रियों आदि से कार्य लेन के लिए भोजन खाता है।

39. **प्रश्न**–एक शरीर में एक ही जीवात्मा रहता है या अनेक भी रहते हैं? **उत्तर**–एक शरीर में कर्ता और भोक्ता एक ही जीवात्मा रहता है, अनेक जीवात्माएं नहीं रहते। हाँ, दूसरे शरीर से युक्त दूसरा जीवात्मा तो किसी शरीर में रह सकता है, जैसे माँ के गर्भ में उसका बच्चा।

40. **प्रश्न**–जीवात्मा शरीर में एकदेशी है या परिच्छन्न (व्यापक) विभू? **उत्तर**–शरीर में जीवात्मा एकदेशी है, व्यापक नहीं, यदि व्यापक होता तो शरीर

के घटने-बढ़ने के कारण यह नित्य नहीं रह पायेगा।

41. **प्रश्न**–जीव की परम उन्नति, सफलता क्या है? **उत्तर**–परमात्मा-जीवात्मा की परम उन्नति आत्मा का साक्षात्कार करके परम शांतिदायक मोक्ष को प्राप्त करना है।

42. **प्रश्न**–क्या जीवात्मा को प्राप्त होने वाले सुख-दु:ख अपने ही कर्मों के फल होते हैं? या बिना ही कर्म किये दूसरों के कर्मों के कारण भी सुख-दु:ख मिलते है? **उत्तर**–जीवात्मा को प्राप्त होने वाले सुख-दु:ख अपने कर्मों के फल होते हैं किन्तु अनेक बार दूसरे के कर्मों के कारण भी सुख दु:ख प्राप्त हो जाते (फल रूप में नहीं) हैं।

43. **प्रश्न**–किन लक्षणों के आधार पर यह कह सकते हैं कि किस व्यक्ति ने जीवात्मा का साक्षात्कार कर लिया है? **उत्तर** मन–इन्द्रियों पर अधिकार करके, सत्यधर्म न्यायाचरण के माध्यम से शुभकर्मों को ही करना और असत्य अधर्म के कर्मों को न करना तथा सदा शांत, संतुष्ट और प्रसन्न रहना इस बात का ज्ञापक होता है कि इस व्यक्ति ने आत्मा का साक्षात्कार कर लिया है।

44. **प्रश्न**–क्या ईश्वर जीवात्मा के पाप क्षमा करता है? **उत्तर**–ईश्वर कभी किसी मनुष्य के किए हुए पाप-कर्म को क्षमा नहीं करता। मनुष्य जो पाप कर्म करता है उसका फल उसे भोगना पड़ता है जो मनुष्य यह सोचता है कि उसके द्वारा किए जा रहे पाप-कर्म को कोई देख नहीं रहा है यह उस मनुष्य की सबसे बड़ी अज्ञानता है, मूर्खता है क्योंकि ईश्वर कण-कण में विद्वमान् है और स्वयं उस पाप-कर्म को करने वाले मनुष्य के अंदर बैठा हुआ, मनुष्य द्वारा मन, वचन और इन्द्रियों के द्वारा किए जा रहे पाप व पुण्य कर्म को देख रहा है। जो मनुष्य पाप कर्म कर देता है परंतु बाद में उसका पश्चाताप करता है और आगे से पाप कर्म नहीं करने की प्रतिज्ञा करता है। प्रतिदिन ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करता है, ईश्वर उस मनुष्य की आत्मा के बल को इतना बढ़ा देता है कि जब दुख उसके जीवन में आता है तो वह दुख से घबराता नहीं है। योगीराज श्रीकृष्ण जी महाराज ने गीता के अन्दर कहा है मनुष्य जो भी **"अवश्यमेव हि भोक्त्वयं कृतं कर्मः शुभाशुभम्"** शुभ और अशुभ कार्य करता है उनका फल उसे सुख व दुख रूप में अवश्य ही भोगना पड़ता है। इसलिए जो भी कोई गुरु या व्यक्ति आपसे कहे कि किसी पर विश्वास करने से, वह ईश्वर से आपके पाप-कर्म को क्षमा करा देगा अथवा फलां मंदिर या तीर्थ स्थान पर जाने, दान देने या स्नान करने से आपका पाप-कर्म ईश्वर क्षमा कर देगा, यह समझिए वह ठग है और आपको धोखा दे रहा है क्योंकि ईश्वर अपनी न्याय व्यवस्था में किसी की सहायता नहीं लेता और ना ही किसी की सिफारिशें मानता है।

पुस्तक परिचय

भारत वर्ष का इतिहासः पंडित भगवद्दत्त रु. 300.00

भारत की सर्वप्रथम सभ्यता तो वैदिक सभ्यता ही थी, जिस से भारत वर्ष का इतिहास प्रारंभ होता है भारतीय इतिहास के प्रथम स्रोत भी वैदिक ग्रन्थ ही हैं जैसे वेदों की वें शाखाएं जिनमें ब्राह्मण-पाठ सम्मिलित हैं, ब्राह्मण ग्रंथ, कल्पसूत्र, आरण्यक और उपनिषद् ग्रंथ! इन ग्रंथों में भारत-युद्ध काल के सहस्रों वर्ष पूर्व की अनेक ऐतिहासिक घटनाएं वर्णित हैं। भारतीय वांग्मय में स्थान-स्थान पर इतिहास की घटनाओं का वर्णन भरा पड़ा है, लेखक ने उन घटनाओं को क्रमबद्ध करने का संक्षिप्त प्रयास किया है। भारतीय इतिहास को बहुत विकृत कर दिया गया है।

सत्य को असत्य प्रदर्शित किया गया और असत्य को सत्य बनाने का यत्न किया गया। इसके भयंकर दुष्परिणाम हुए भारतीय अपना भूत ही भूल गए, वें इन मिथ्या कल्पनाओं को ही सत्य समझने लगे। लेखक ने अपने अध्ययन काल में ही निश्चय कर लिया था कि वह अपना सारा जीवन भारतीय संस्कृति और इतिहास के पाठ तथा स्पष्टीकरण में लगाएंगे आशा है इतिहास के लेखक और पाठक उनके इस परिश्रम से लाभान्वित होंगे।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका : महर्षि दयानंद रु. 150.00

वेद ईश्वरीय ज्ञान है, आधुनिक युग में वेद के प्रति अपने जीवन को समर्पित किया है तो प्रथम नाम स्वामी दयानन्द सरस्वती का ही आयेगा। वैदिक विचारधारा की शिक्षाओं का स्रोत वेद ही हैं, स्वामी जी ने जब वेदों का भाष्य करना चाहा तो उससे पहले वेद के मानक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना अनिवार्य समझा।

महर्षि ने इस उद्देश्य को सामने रखते हुए 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ' का प्रणयन किया, दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं ऋषि दयानन्द ने वेदों के अर्थ रूपी ताले को खोलने के लिए हमें कुंजी रूप में 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' प्रदान की, इसीलिए ऋषि ने अपने जीवन में वेदभाष्य लेने वाले के लिए 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' साथ में लेने को अनिवार्य बताया।

वैदिक सम्पति : पं. रघुनन्दन शर्मा रु. 450.00

वैदिक सम्पति के सुयोग्य लेखक महोदय ने वैज्ञानिक-भौतिक-आध्यात्मिक-राजनैतिक-सामाजिक, प्राच्य तथा अर्वाच्यसाहित्य, प्राणिशास्त्र, भूगोल, खगोल, ज्योतिष, नाना लिपिविज्ञान तथा भाषाशास्त्रादि अनेक विषयों का दिग्दर्शन हमें इस ग्रन्थ में करवाया है और अनेक भिन्न-भिन्न विषयों पर पाश्चात्य एवं पौरास्त्य विद्वानों के लिखे विविध ग्रंथों की छानबीन करके वैदिक सिद्धान्तों का सतर्क और सप्रमाण प्रतिपादन किया है।

जून २०१७ Registered with Regn. of News Paper for India
वेदप्रकाश R.No. 627/57 Regd. No. DL(DG-11)/8030/2015-17, U(DGPO) 01/2015-17

पुनः प्रकाशित पुस्तकें

रक्तसाक्षी पंडित लेखरामः प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु रु. 400.00

पं. लेखराम जी के जीवन व बलिदान पर किस-किस ने क्या-क्या लिखा है, अपनों ने क्या लिखा? बेगानों ने क्या लिखा? उसकी जानकारी इस पुस्तक में दी गई है। पं. लेखराम जी की उहा, शूरता, वीरता, प्रत्युपन्नमति, उनके शास्त्रार्थों के सर्वाधिक प्रेरक प्रसंग भी इस ग्रन्थ में मिलेंगे।

जान जोखिम में डालकर, शीश तली पर धर कर पंडित जी ने धर्मरक्षा, जातिरक्षा के लिए क्या-क्या किया, इसकी विस्तृत और प्रामाणिक जानकारी जितनी इस ग्रन्थ में है और कहीं नहीं मिलेगी। अनेक दुर्लभ ग्रन्थों व दस्तावेजों के प्रमाणों के छायाचित्र देकर आर्यसमाजिक साहित्य में एक स्मरणीय अभिवृद्धि की गई है।

पं. लेखराम जी के जीवन, साहित्य व बलिदान के संबंध में ईसाई, मुसलमानों के पत्रों व ग्रन्थों के अत्यन्त उपयोगी प्रमाणों को उद्धृत करने के लिए लेखक ने भरपूर श्रम किया है। पं. लेखराम जी की देन व उपलब्धियों पर स्वामी श्रद्धानन्द जी से लेकर विश्व प्रसिद्ध वेदज्ञ और इतिहासकार पं. भगवदद्दत जी के उदगार इस ग्रन्थ में पाकर आप अपने भीतर एक नवीन उर्जा का संचार अनुभव करेंगे।

अग्निहोत्रः एक अध्ययन डॉ. धर्मेन्द्र शास्त्री रु. 300.00

प्रस्तुत पुस्तक में अग्निहोत्र विषयक अनेक आख्यानों-उपाख्यानों द्वारा इसका सविस्तार विवेचन करने का एक लघु प्रयास किया गया है। अग्निहोत्र की प्रेरण समस्त शास्त्रों में उपलब्ध होती है। चारों ही वेदों में अग्निहोत्र महिमा विषयक मन्त्रों का संकलन कर उनका अर्थ प्रस्तुत किया गया है।

ज्ञान, कर्म का महत्व मानव जीवन में कितना अधिक है यह रहस्य किसी भी मानव द्वारा अज्ञात छिपा हुआ नहीं है। अग्निहोत्र केवल कर्मकाण्ड ही नहीं है, अपितु इसकी वैज्ञानिकता भी महान है। इसके द्वारा शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक लाभ अनेकों हुए हैं। जिन-जिन लोगों ने इस पर परिक्षण किये हैं, उनकी यथार्थ अनुभूतियों का भी वर्णन करने का प्रयास किया है।

पाँच महायज्ञों का अनुष्ठान प्रत्येक सद्गृहस्थ को आवश्यक एवं अनिवार्य रूप से करना चाहिए। उनका यथास्थान संक्षेप से विधि विधान सहित निर्देशन दिया गया है।

प्राप्ति स्थानः विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

4408, नई सड़क, दिल्ली-6, दूरभाष 23977216, 65360255

Email: ajayarya16@gmail.com Web: www.vedicbooks.com